॥ तृतीय अध्याय ॥

–=:: मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की परंपरा और शेवड़ेजी ::=–

हिंदी साहित्य का आधुनिक काल गद्यकाल है और गद्य का सर्वश्रेष्ठ रूप है उपन्यास । उपन्यास आधुनिक युग की लोकप्रिय विधा है । "हिंदी उपन्यास के क्षेत्र में प्रेमचंद एक ऐसे उच्च शिखर है, जहाँ से खड़े होकर हिंदी पाठकीय संवेदना और उनके रूपाकार के संबधं में सुविधापूर्वक विचार किया जा सकता है ।" [1] हिंदी उपन्यास साहित्य को तीन कालों में बाँटा जा सकता हैं –

1. **प्रेमचंद पूर्व उपन्यास** (1870 से 1916 तक)
2. **प्रेमचंद कालीन उपन्यास** (1916 से 1936 तक)
3. **प्रेमचंदोत्तर उपन्यास** (1936 से अब तक)

1. प्रेमचंद पूर्व काल :

प्रेमचंद पूर्व काल में भारतेंदु और द्विवेदी युग आते हैं । इस प्रारंभिक काल में हिंदी में बाँगला से और अँग्रेजी से अनेक उपन्यासों का अनुवाद किया गया । "बांगला उपन्यासों के अनुवादों से हिंदी में अनेक नवीन शब्दों, मुँहावरों और वाक्यों का प्रचार हुआ । साथ ही उनसे अतिरंजना, संस्कृत पदावली और कोमल तथा सुकुमार भावनाओं और कल्पनाओं को प्रश्रय मिला ।" [2] हिंदी में प्रेमचंद पूर्व उपन्यास दो प्रकार के दिखाई देते है –

एक है नीतिपरक सामाजिक उपन्यास । और
दूसरा है मनोरंजन प्रधान उपन्यास ।

अन प्रारंभिक उपन्यासों ने हिंदी गद्य को विकसित करने का तथा उपन्यासों में सामाजिकता लाने का प्रयत्न किया । इस युग के उपन्यास जीवन की वास्तविकता से परे थें । इससे उपन्यास में कोरी कल्पना ही दिखाई देती है । यह साहित्य जीवन से कटा हुआ और अयथार्थ दिखाई देता है । " कुछ आदर्शवादी उपन्यासकारों ने पुराने आदर्शों को सुधारे

हुए रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया लेकिन यह अवश्य है की वे आदर्श किताबी अधिक थे ।" [3]

कला की दृष्टि से यह उपन्यास साहित्य उच्च कोटि का नहीं कहा जा सकता । उसकी शैली में पुरानापन है । इस काल के प्रमुख लेखक है, "राधाचरण गोस्वामी", "देवीप्रसाद शर्मा", "गोपालराम गहमरी", "भारतेंदु", "किशोरीलाल गोस्वामी", आदि । इस काल के प्रसिध्द उपन्यास, "नूतन ब्रह्मचारी", "सौ अजान एक सुजान", "लवंग लता", "दीपनिर्वाण", आदि ।

2. प्रेमचंद युग :

यह भारतीय समाज के नवजागरण का युग है । "19 वी शताब्दी के उत्तरार्ध में नवजागरण का जो स्वर गूँजा वह बीसवी शताब्दी के प्रारंभ में पुष्टतर हुआ ।" [4] प्रेमचंदजी ने उपन्यास को मानवजीवन के नीकट लाने बहुत बड़ा कार्य किया है । प्रेमचंद युगीन उपन्यासकारों ने अपने युग की सामाजिक दुर्दशा तथा उस समय की अन्य समस्याओं - दहेज, विधवा-विवाह, वेश्या समस्या, किसानों का शोषण, राष्ट्रीय आंदोलन जैसे अनेक प्रश्नों का चित्रण अपने उपन्यासों में किया है । "अपने समसामायिक जीवन से प्रेमचंद बहुत गहरे अर्थ में संपृक्त थे इसलिए उनके उपन्यासों मे पुरा युग अनेक रूप-रंगो में अभिव्यक्त हुआ है ।" [5] प्रेमचंद पहले कथाकार हैं जिन्होंने हिंदी उपन्यासों को यथार्थ से जोड़ा । प्रेमचंद के पूर्व उपन्यासों का संबंध तिलस्मी, जासूसी तथा रोमांचक घटनाओं से था । प्रेमचंद युग में सर्वप्रथम उपन्यास में घटनाओं तथा पात्रों के चरित्रचित्रण को प्रमुख स्थान प्राप्त हुआ । "इसीकारण प्रेमचंद युगीन सभी उपन्यासों में परिपूर्णता तथा सुसंबध्दता पाई जाती है ।" [6] इसकाल के उपन्यासकारों ने आदर्शोन्मुख यथार्थवाद का चित्रण बड़े सुंदर ढंग से किया है । सामाजिक तथा राजनीतिक समस्याओं पर प्रकाश डालते हुए भारतीय जीवन का यथार्थ चित्रण किया है ।

"प्रेमचंद के पहले के पाठकों का एक विशेष प्रकार का रुचिबोध था। लेकिन उसमें भी परिवर्तन के आसार नजर आने लगे । देश में नवजागरण के स्वर गूँज रहे थे और उसकी ध्वनि सभी के कानों पर पड़ रही थी । नवयुग की समस्याएँ और भाव – विचार सभी को स्पंदित कर रहे थे ।" [7] केवल मनोरंजन के लिए पढ़नेवाले पाठक भी देश की दुर्दशा से परिचित होने लगे थे । वे भी उपन्यासों में वास्तविक जीवन और समाज की जीवित धड़कनों को अनुभव करना चाहते थे । और इसीके परिणाम स्वरूप इस काल के लेखकों ने सामाजिक यथार्थ का चित्रण करते हुए आदर्शों की स्थापना की । इसीकारण हिंदी गद्य और उपन्यास साहित्य की दृष्टि से प्रेमचंद काल का बड़ा योगदान रहा है ।

1936 के आसपास हिंदी उपन्यासों में गहराईयाँ और बारीकियों की खोज प्रारंभ हो जाती हे और व्यापक आयाम के उपन्यास आदर्शों की काल्पनिक उँचाईयाँ से उतरकर यथार्थ के ठोस धरातल की ओर अग्रसर होने लगते हैं । कहा जाता है कि बहिरंग संसार की चप्पा चप्पा भूमि प्रेमचंद ने छान ली थी । इसलिए उनके बाद उपन्यासकारों के लिए कुछ कहने को शेष नहीं रह गया । "परंतु प्रेमचंद के परवर्ती उपन्यासकारों की भूमि का पार्थक्य और अलगाव प्रेमचंद की सिध्दी की चरमता का द्योतक उतना नहीं है जितना उस परिवर्तित युगीन पृष्ठभूमि का, जिसपर नए लेखक खड़े हुए ।" [8]

इस काल के अन्य लेखक हैं, "किशोरीलाल गोस्वामी", "वृन्दावनलाल वर्मा", "जैनेन्द्रकुमार", "चतुरसेन शास्त्री", "यशपाल", "जयशंकर प्रसाद", ऋषभचरण जैन", "चतुरसेन शास्त्री", "प्रतापनारायण श्रीवास्तव" आदि । और इसकाल के प्रसिध्द उपन्यास हैं – "मृगनयनी", "परख", "तपोभूमि", "वरदान", "प्रतिज्ञा", "सेवासदन", "वैशाली की नगरवधू", "चित्रलेखा", "दिव्या", "झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई", आदि ।

"इस समय उपन्यास का पूर्ण विकसित और परिष्कृत स्वरूप प्रेमचंद ही लेकर आए जिसकी अंतिम परिणति उनके "गोदान" (1936) नामक उपन्यास में मिलती है ।" [9] प्रेमचंद्र में अव्दितीय वर्णनात्मक शक्ति है और वे मनोवैज्ञानिक दृष्टि से मानव–स्वभाव का

अत्यंत सुंदर उद्घाटन करते हैं । प्रेमचंद के "गोदान" के बाद हिंदी उपन्यास साहित्य में नए नए मार्गों का सर्जन हुआ ।

प्रेमचंदोत्तर काल :

"प्रेमचंद के बाद गाँधीवादी राजनीतिक चेतना के स्थापन पर हिंदी साहित्य में मार्क्सवादी चेतना की एकदम से बाढ़ आ गई । उपन्यास के क्षेत्र में यशपाल ने इसी चेतना से प्रेरित होकर सामाजिक यथार्थवाद की पृष्ठभूमि में व्यक्ति और समाज को नए युगीन परिप्रेक्ष्य में देखा और परखा ।" [10] उपन्यास परंपरा की इन भिन्न प्रवृत्तियों को ध्यान में रखते हुए उन्हें पाँच भागों में विभाजित किया जा सकता हैं । "प्रथम खंड में सामाजिक उपन्यास, दुसरे में व्यक्तिवादी, तीसरे में मनोविश्लेषणवादी, चौथे में समाजवादी और पाँचवे में ऐतिहासिक उपन्यासों की प्रवृत्तियों का विस्तार है ।" [11]

सामाजिक प्रवृत्ति के अंतर्गत "प्रेमचंद", "सियारामशरण गुप्त", "फणीश्वरनाथ रेणु", "अमृतलाल नागर" जैसे उपन्यासकार आते हैं । इसीतरह दूसरे खंड में "जयशंकर प्रसाद", भगवतिचरण वर्मा", "रामेश्वर शुक्ल", "अंचल", विष्णु प्रभाकर आदि आते है । और इसके बाद मनोविश्लेषणवादी उपन्यास प्रवृत्ति है जो पाश्चात्य मनोविश्लेषण विषयक सिध्दांतोंपर प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप में प्रभावित है । "जिसमें व्यक्तिवादी उपन्यासकार की वैयक्तिक चेतना की अतिशय अंतर्मुखता की निर्विवाद अभिव्यंजना उपलब्ध होती है । इस श्रेणी में "जैनेन्द्रकुमार", "इलाचंद जोशी", "अज्ञेय", डा.देवराज" धर्मवीर भारती", "अनंत गोपाल शेवडे", "प्रभाकर माचवे", आदि की औपन्यासिक कला की विशेषताओं का प्रकटीकरण करने से हिंदी उपन्यास प्रवृत्तियों के क्रमिक विकास की रूपरेखा निर्दिष्ट हो जाती हैं ।" [12] इसके बाद समाजवादी ओर ऐतिहासिक उपन्यासों की प्रवृत्ति दिखाई देती है ।

मनोवैज्ञानिक उपन्यास :

मार्क्स की क्रांतिवादी चेतना से प्रभावित होकर हिंदी में सामाजिक यथार्थ के विभिन्न स्तर अपनाए गए उसीतरह यूरोप के मनोविश्लेषण शास्त्र के सिध्दांतों ने भी

हिंदी उपन्यास की गतिविधि को प्रभावित किया । सबसे अधिक प्रभाव पड़ा फ्रायड् का । जिसके मनोविश्लेषण ने हमें संपूर्ण चरित्र अध्ययन और यथार्थवादी व्यक्तित्व प्रतिष्ठा के लिए नई पध्दतियाँ दी । अपना नया औपन्यासिक दृष्टिकोण व्यक्त करते हुए अज्ञेयजी ने भी यही कहा है, "नए वैज्ञानिक अनुसंधान और ज्ञान ने उपन्यासकार की दृष्टि बदल दीं । उसका लिखना ही बदल गया । क्यों कि उसकी दृष्टि बदल गई । उसके बाद एक और बहुत बड़ा परिवर्तन फ्रायड् के साथ आया । उसकी मनोविश्लेषण पध्दति ने व्यक्ति मानस और व्यक्ति चेतना की गहनताओं पर नया और तीखा प्रकाश डाला । इससे उपन्यासकार को व्यक्ति मानस को समझने में बड़ी सहायता मिली, बल्कि एक नई दृष्टि और पैठ मिली जिसके सहारे वह विशेष व्यक्ति के मन के भीतर होनेवाले (काँशिसनेस) संघर्ष को पहचान सका । "चेतन प्रवाह (स्ट्रीम ऑफ कॉशसनेस) अथवा स्वगत भाषण (इंटरनल मोनोलॉग) के उपन्यास इस दृष्टि के परिणाम हैं । और आधुनिक उपन्यासों में मानसिक संघर्ष का विश्लेषण विशिष्ट महत्त्व रखता है ।" [13]

हिंदी में इस परंपरा का आरंभ बीसवी सदी के चौथे दशक में हुआ । यह प्रवृत्ति बाहर से आकर भी देश की मिट्टी में ही पल्लवित हुई । "बीसवी सदी के आरंभ में एक ओर फ्रांसिसी और रूसी उपन्यास ने प्रकृतवाद की भूमि पर नई उपलब्धियाँ प्राप्त की दूसरी ओर रूस के उपन्यासकार टालस्टाय, तुर्गनेव, चेखाव आदि की कृतियों को सार्वभौम स्वीकृति मिली । इसी बीच अवचेतन, अचेतन, संबंधी नई खोजों की धूम मच गयी और साहित्यकारों के बीच भी मन के विभिन्न स्तरों की व्याख्या के लिए मनोविश्लेषणात्मक पध्दति मान्य हो गई ।" [14] नए उपन्यासकारोंने व्यक्ति को केंद्र में रखकर उपन्यास लिखने का यत्न किया । ये उपन्यास पहले के उपन्यासों से सर्वथा भिन्न थे । उनका संबंध शरीर से कम आत्मा से अधिक हो गया । उसीकारण उनकी जीवन-दृष्टि भी समग्र और व्यापक न रहकर खंडित परंतु गहरी हो उठी ।

जैनेंद्र :

हिंदी में इस धरातल को स्वीकार करनेवाले पहले उपन्यासकार थे जैनेन्द्रकुमार । जैनेन्द्र ने अपने उपन्यासों में व्यक्ति को केंद्रीय सरोकार का विषय बनाया । जैनेन्द्रजी ने प्रेमचंद के समय में ही उपन्यास को वस्तु और शिल्प की नई भूमि पर खड़ा करने का प्रयत्न किया था । "उसमें वैयक्तिक सत्यों के मनोवैज्ञानिक उद्घाटन और विश्लेषण की क्षमता और योग्यता पैदा की थी और उसे कथात्मक ढर्रों और रूढ़ियों से मुक्ति दिलाई थी ।" [15] अपने उपन्यासों में उन्होंने बाहय जगत् के सत्य की अवहेलना करके भाव जगत् के सत्य को पकड़ना चाहा है जिससे बाहय जगत् की उथल-पुथल का स्थान अंतर्द्वंद्वों और अंतस्संघर्षों ने और घटनाओं का स्थान वेदना और व्यथा ने ले लिया है । मन की गहराइयों और उलझनों की गुत्थीयों को सुलझाने के लिए फ्रायड़ के मनोविज्ञान का उन्होंने सहारा लिया है । "सामाजिक प्रश्न जैनेंद्र की दार्शनिकता से टकराकर शक्तिहीन हो जाते है और सारे उपन्यास पर ऐसे दर्शन का आच्छादन छा जाता है जो न सुनिश्चित है और न स्पष्ट । जो चित्त पर निर्मलता नहीं बल्कि उव्देलन के बाद की निस्पंद जड़ता का प्रभाव छोड़ जाता है । उनके उपन्यास है, "परख", "सुखदा", "कल्याणी", "त्यागपत्र", "सुनीता" आदि ।

इलाचंद जोशी :

इस परंपरा के दूसरे उपन्यासकार है "इलाचंद जोशी" । जोशीजी के सभी उपन्यास व्यक्ति अहंभाव पर आधारित है । "जोशीजी ने मनोविज्ञान को अपनाया है । फ्रायड़, एड़लर युग के कुछ मनोविश्लेषणात्मक तत्वों को सामाजिक मनोवृत्तियों का अध्ययन करके समाज की मनोवृत्तियों को समझने का प्रयास किया है ।" [16] उनका मत है कि जीवन के यथार्थ दर्शन के लिए व्यक्ति के अंतःस्थल तथा अंतर्जीवन का निरीक्षण करना अत्यंत आवश्यक है ।" [17]

"जोशीजी ने अज्ञात चेतनालोक के भीतर दबी छिपी कामनाओं, वासनाओं, कुंठित प्रवृत्तियों को अभिव्यक्ति दी है ।" "अपने उपन्यासों मे उनका ध्येय अहंभाव की एकांतिकता पर निर्भय प्रहार करना रहा है । आज की परिस्थिती में अहं तत्त्व असंतुलित रूप में प्रखर हो गया है । अहंवादी आत्मघाती भी होता है और समाजघाती भी ।"[18] वह स्वयंको और अपने परिवेश को भी दूषित करता है । इसके कारण वह स्वयं को और अपने परिवेश को भी दूषित करता है । इसके कारण सबसे अधिक शोषण हुआ है नारी का, जिसमें पुरूष के अहं के प्रति एकांत समर्पण नहीं विद्रोह का स्वर है । "जहाज का पंछी" में अहं और परिस्थितियों से पीड़ित छटपटाती मानव चेतना का विश्लेषण व्यक्ति और समाज दोनों के स्तर पर हुआ है । उनकी दृष्टि निर्मम और तटस्थ, ऋषि दृष्टि सी है ।" [19]

अज्ञेय :

हिंदी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों को प्रौढ़ रूप में बदल दिया अज्ञेयजी ने । उनमें मनोविश्लेषण की गहन क्षमता है, सूक्ष्म सौंदर्यबोध और अनुकूल शिल्पसृष्टि करने की शक्ति है । जीवन के अनुभवों को उद्घाटित करते हुए अज्ञेयजी की चित्रात्मक वर्णन शैली सजीव हो उठती है । "अनुभूतियों में बेहद सच्चाई है, तीव्रता होती है, सूक्ष्मता होती है । अनुभूति के विविध आयामों को अनुभूतियों के जटिल, संश्लिष्ट संबंधों को बारीक से बारीक बोधों को या बोध के बारीक से बारीक स्तरों को इन उपन्यासों में कलात्मक माध्यम से उद्घाटित किया गया है । इसका कारण शायद यही है कि अज्ञेय के प्रायः सारे उपन्यास स्वयं लेखक के व्यक्तित्व के भीतर से फूटे है ।"[20] उनके प्रसिध्द उपन्यास है, "शेखर," "एक जीवनी (दो भाग)) " नदी के व्दीप","अपने अपने अजनबी" ।

उपर्युक्त उपन्यासकारों के अतिरिक्त अन्य उपन्यासकार हैं, "भगवतिप्रसाद वाजपेयी", "डा.देवराज", "धर्मवीर भारती", "डा. प्रभाकर माचवे" आदि ।

शेवड़े अ.गो. :

1929 में जैनेन्द्रद्वारा लिखे गए "परख" उपन्यास से हिंदी में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की परंपरा शुरू हुई। श्री. अ.गो. शेवड़ेजी की उपन्यास मालिका 1932 में शुरू हुई। "ईसाईबाला" (1932) यह उनका प्रथम उपन्यास है। राष्ट्रीय आंदोलन पर लिखा गया यह उपन्यास है। इसके बाद उन्होंने "पूर्णिमा", "मृगजल" और "निशागीत" ये उपन्यास लिखे।

1950 मे लिखे गए "पूर्णिमा" उपन्यास के बारे में स्वयं लेखक कहता है कि, "पूर्णिमा" एक मनोवैज्ञानिक उपन्यास है, जिसकी नायिका एक कॉलिज की छात्रा है। मानव मन एक गूढ़ पहेली है। इसमें कई बार दो परस्पर विरोधी प्रवाह चलते रहते हैं और बाह्य परिस्थितियाँ या उत्तेजना के अनुसार वे उभरकर सामने आते हैं। इनके कारण उस व्यक्ति के व्यवहार में सामंजस्य स्थापित करना कठिन हो जाता है और उसीसे ट्रेजेडी निर्मित होती है।"[21] इसके बाद"ज्वालामुखी", "मंगला", "परिक्रमा", "भग्नमंदिर", "इंद्रधनुष्य", "कोरा कागज़", "अमृत-कुंभ" आदि उपन्यास आते है। ये सभी उपन्यास भिन्न भिन्न कथा वस्तुओं को लेकर चलते हैं। इनमें बुनियादि बात है मानव का चित्रण। "स्वयं लेखक ने मनुष्य की श्रेष्ठता को स्वीकार किया है। वे कहते हैं – वह अपनी सारी विकृतियों और कमजोरियों के बावजूद मुझे प्रिय लगता है। व्यास महर्षि ने महाभारत में सारे गुह्यतर ज्ञान का यही निचोड़ बताया है — "न हि मानुजात् श्रेष्ठतरं हि किंचिंत्।" (मनुष्य से बढकर श्रेष्ठ और कुछ भी नहीं है।)[22]

"निशागीत" (1948) शेवड़ेजी की लिखी दूसरी औपन्यासिक कृति है। इसमें प्रेम का आदर्शोन्मुखी चित्रण यथार्थ के धरातल पर किया है। निशागीत गीति उपन्यास जैसा मधुर एवं रोचक है। "इसमें जनसेवी डा. मधुसुदन, परिचारिका सुशिला और अध्यापिका पद्मा इन तीन पात्रों के मानसिक चढ़ाव-उतार में कथावस्तु अंकुरित और पल्लवित होती है। इसमें स्त्री-पुरुष के परस्पर प्रेम की वास्तविकता

का बडा ही मनोवैज्ञानिक चित्रण है ।" 23

"मृगजल" (1949 ई.) एक अत्यंत कलापूर्ण एवं रोचक उपन्यास है । इसमें कलाकार का व्यक्तित्व चित्रित किया गया है । "मृगजल यह उपन्यास सामाजिक मनोवैज्ञानिक तथा गाँधीवादी विचारों का चरित्र चित्रण प्रधान उपन्यास है । इसमें चित्रकार की श्रेष्ठता, कला कला के लिए नहीं परंतु जीवन के लिए भी है, गाँधीवादी हृदय परिवर्तन तथा फ्रायड के मनोवैज्ञानिक सिध्दांतों का प्रतिपादन किया गया है । पात्रों का आंतरिक तथा बाहय व्दंव्द उसकी विशेषता है ।" 23

1950 में लिखे एक "पूर्णिमा" उपन्यास में सेक्स, प्रेम और विवाह को एक नयी पृष्ठभूमि पर चित्रित करने का प्रयत्न हुआ है । "शेवड़ेजी का यह अत्यंत रोचक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा आधुनिक उपन्यास है, जिसमें मानव-मन की व्दंव्दात्मक प्रकृति का बड़ा सुंदर और मार्मिक विश्लेषण हुआ है ।"24 पूर्णिमा का जीवनवृत्तांत बतानेवाले इस उपन्यास में पूर्णिमा के मनोभावों तथा उसके अंतर्व्दंव्दों को अच्छी तरह से रेखांकित किया गया है । "पूर्णिमा अनिंद्य सुंदरी है जो मोहवश गलती करती हुई समाज की घृणा का पात्र बनती है पर शेवड़ेजी ने सहानुभूति से देखकर गाँधीवादी तत्वों के अनुसार उसका उध्दार किया है जो आधुनिक फ्रायडीय सिध्दांतों को चुनौती देता है । 25

स्वातंत्र्योत्तर कालीन हिंदी राजनीतिक उपन्यासों में "ज्वालामुखी" एक महत्त्वपूर्ण उपन्यास है । इसमें सन 1942ई. की "अगस्त-क्रांति" का चित्रण किया गया है जो लेखक की आप-बीती भी कही जा सकती है । ज्वालामुखी उपन्यास में गाँधीवादी राजनीति का उद्देश्य स्पष्ट किया गया है ।

1958 में लिखा गया "मंगला" यह शेवड़ेजी का सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक उपन्यास है । प्रेमचंद के सामाजिक उपन्यासों की परंपरा में यह उपन्यास आता है । "यह उपन्यास अनमेल विवाह तथा विवाह और प्रेम, घर और बाहर जैसी समस्याएँ

लेकर विकसित हुआ है ।" [26] इसमें एक अंधे संगीतकार का जीवन-वृत्तांत है । मंगला जैसी सुंदरी से उसका ब्याह हो जाता है लेकिन मंगला का विद्रोही रूप विवाह के बाद प्रगट हो जाता है और वह चंद्रकांत के साथ भाग जाती है और फिर वहाँ से पश्चात्तापदग्ध होकर फिर संगीतकार सदानंद के पास आ जाती है और सदानंद भी उसे अपना लेता है । इसमें मंगला के मनोभावों को चित्रित किया गया है । "घर में बाहर के प्रवेश ने परिवार नष्ट कर दिया था । परंतु मंगला के ह्दय परिवर्तन से घर का पंछी घूम घूम कर फिर अपने घोंसले में वापस आया । इस प्रकार मंगला उपन्यास अनेक समस्याओं को हमारे सामने उपस्थित करते हुए मनोवैज्ञानिक पहलूओं पर प्रकाश डालता है ।" [27]

"अधूरा सपना (परिक्रमा) इस उपन्यास का प्रकाशन 1959 ई. में हुआ । मनुष्य अपनी जिंदगी में अनेक अधूरे सपनों के संजोकर रखता है । उनकी मधुर स्मृतियाँ, खुमारी उसका जीवनाधार बन जाती है । प्रस्तुत उपन्यास में इसी मनोवृत्ति का विश्लेषण हुआ है । "व्यक्तिगत प्रेम और राष्ट्रप्रेम, मनोवैज्ञानिकता और हिंदू आदर्श का यह कहीं समन्वय हुआ है तो शेवडेजी के "अधूरा सपना में । [28] बद्रीकेदार की यात्रा की पृष्ठभूमि पर लिखे गए इस लघुउपन्यास में संघर्षमय, दर्दभरी आदर्श प्रेमकहानी है । "इस उपन्यास में प्रेम की विचित्रता, ताजगी पागलपन तथा आंतरिक रूप से जलने की "अहं" भावना का मनोवैज्ञानिक चित्रण है ।" [29]

1960 में लिखा गया "भग्नमंदिर" एक राजनीतिक उपन्यास है । इसमें स्वाधीनता के बाद के राजनीतिक वातावरण का यथार्थ चित्रण किया गया है ।

1966 में शेवडेजी ने "इंद्रधनुष्य" उपन्यास लिखा । स्वप्न सिध्दांत और मनोविश्लेषण के आधारपर एक नवीन दृष्टिकोण इसमें अपनाया गया है । पारिवारिक समस्या पर आधारित होते हुए भी यह उपन्यास सामाजिकता की अपेक्षा मनोवैज्ञानिक अधिक है । "इस उपन्यास में फ्रायड की लिबिडो प्रवृत्ति तथा

A
11977

रवीन्द्रनाथ के घर-बाहर समस्या को उठाया गया है । शेवड़ेजी ने इस उपन्यास में नारी जीवन के प्रति एक क्रांतिकारी दृष्टिकोण अपनाया है और नारी को विद्रोही रूप में चित्रित किया है । वीणा तथा ज्ञानशंकर का अंतर्द्वंद्व और मानसिक संघर्ष, मनोविश्लेषणात्मक चित्रण अत्यंत कलात्मक सिध्द होता है ।" [30]

"कोरा कागज़" (1965) शेवड़ेजी की यह एक साहित्यिक कृति है जिसमें साहित्यकार के जीवन की आत्मकथात्मक शैली की विशेषता दिखाई देती है । "कोरा कागज़ एक आदर्श लेखक की कसौटी से जीवन और उसके सत्यों और स्वयं लेखनकार्य को भी परखने का प्रयत्न किया गया है । इसका कॅनवस बहुत व्यापक है । अनेक पात्रों के माध्यम से यह एक सरस, रोचक और ह्रदय स्पर्शी कहानी कहता है ।"[31]

शेवड़ेजी का अंतिम उपन्यास "अमृत-कुंभ" (1976) है । इसमें सत्यकाम और पालीन के मीलन की कथा है । शेवड़जी का यह उपन्यास सभी उपन्यासों से अधिक गहरा और व्यापक है । "इसका कॅनवस विश्वव्यापी बन, बड़ा है और इसका चिंतन और जीवन दर्शन कुछ कालातीत एवं चिरंतन तत्वों पर आधारित है जो अत्यंत कलात्मक ढंग से एक रोचक कथा के रूप में प्रस्तुत किया गया है ।" [32]

शेवड़ेजी के उपन्यास साहित्य को देखने से हम कह सकते है कि अपने उपन्यासों में उन्होंने जीवन के विभिन्न अंगो का विभिन्न घटनाओं का चित्रण किया जो सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक दिखाई देता है ।

निष्कर्ष :

प्रेमचंद पूर्व कालीन उपन्यास सिर्फ मनोरंजन के लिए थे । प्रेमचंद युगीन उपन्यासों में सामाजिकता तथा राष्ट्रभक्ती जैसा बदलाव आ गया । प्रेमचंदोत्तर काल में उपन्यासों का विकास विविध रूपों में हो गया । जिससे जैनेन्द्र, अज्ञेय जैसे उपन्यासकारों ने व्यक्ति को केंद्र में रखकर व्यक्तिवादी उपन्यासों की रचना की ।

जैनेंद्र जी ने अपने उपन्यास "परख" से मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की नींव डाली । अज्ञेय, धर्मवीर भारती, नरेश मेहता, इलाचंद जोशी, डा. देवराज इस परंपरा के अन्य लेखक हैं । और इन्ही लेखकों के साथ श्री. अनन्त गोपाल शेवड़े जी का स्थान प्रेमचंदोत्तर कालीन उपन्यासकारों में अहिंदी भाषी होते हुए भी महत्त्वपूर्ण दिखाई देता है । उन्होंने उपन्यास, कहानी, निबंध आदि साहित्य की विभिन्न विधाओं में अपनी कलम चलायी । परंतु उपन्यास स्वयं उनकी भी प्रिय विधा है । क्यों कि उपन्यास में जीवन का या किसी भी समस्या का चित्रण विस्तारपूर्वक किया जा सकता है । अपने उपन्यासों में उन्होंने मानव की महानता का ही समर्थन किया है । सभी उपन्यास भिन्न भिन्न कथा वस्तुओं को लेकर चलते है पर इनमें बुनियादी बात है मानव का चित्रण जो अपनी सारी विकृतियाँ ओर कमजोरियों सहित चित्रित किया गया है । जीवन में घटित होनेवाली घटनाओं का चित्रण करते समय उनके पात्र सजीव हो उठते है वे असली मालूम पड़ते है । उनमें वही सच्चाई या झूठापन दिखाई देता जो जीवन में उस प्रसंग में दिखाई देता है । प्रसंगानुसार ये पात्र झूठ या सच बोल देते हैं लेकिन उनके अंतर्मन के व्दंव्द का जो चित्रण शेवड़ेजी करते है । वह अत्यंत रोचक मनोवैज्ञानिक दिखाई देता है । भारतीय दर्शन से प्रभावित होने के साथ ही उनपर रोमाँ रोलाँ, टालस्टाय तथा टैगोर और शरत्बाबू का भी प्रभाव दिखाई देता है । "मंगला" उपन्यास में जैनेन्द्र की तरह एक फूल दो माली वाला त्रिकोणात्मक कथानक है फिर भी उसमें रवीन्द्रनाथ के घर-बाहर जैसा प्रभाव भी दिखाई देता है । जेल जीवन के एकांत में उन्होंने अंग्रेजी, फ्रेंच, रूसी, जर्मन, इटालियन साहित्यकारों के साहित्य को सुरुचि से पढ़ा और इसकारण उनकी प्रतिभा में आया हुआ निखार उनके साहित्य में सदैव प्रतिबिंबित दिखाई देता है । उनका उपन्यास साहित्य रोचक तथा परिपूर्ण दिखाई देता है । इन उपन्यासों में राजनीतिक उपन्यास है -

1. ज्वालामुखी
2. भग्नमंदिर

कोरा कागज़ सामाजिक उपन्यास है । सामाजिक तथा मनोवैज्ञानिक उपन्यास है ।- इंद्रधनुष्य, "मंगला", "निशागीत", "मृगजल", "अधूरा सपना", "पूर्णिमा" आदि । इन उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोणसे प्रस्तुत किये गए पात्रों के मानसिक व्दंव्दों का चित्रण उन्होंने अत्यंत सुंदर ढंग से किया है । इसप्रकार हम कह सकते हैं कि अज्ञेय के पश्चात हिंदी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में डा.देवराज, नरेश मेहता, यादवचंद्र जैन के साथ शेवडेजीका नाम भी महत्वपूर्ण है । शेवडेजी मनोवैज्ञानिक चित्रण करनेवाले एक कुशल उपन्यासकार हैं यह सिध्द होता है ।

—:: तृतीय अध्याय ::=—

संदर्भ-सूची

1.	डॉ. इंद्रनाथ मदान, "हिंदी उपन्यास पहचान और परख,"	पृ.61
2.	लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, "हिंदी साहित्य का इतिहास,"	पृ.260
3.	डॉ. इंद्रनाथ मदान, "हिंदी उपन्यास पहचान और परख,"	पृ.65
4.	संपा. डॉ. रामदरश मिश्र, "हिंदी उपन्यास के सौ वर्ष,"	पृ.33
5.	डॉ. इंद्रनाथ मदान, "हिंदी उपन्यास पहचान और परख,"	पृ.65
6.	– वही –	पृ.60
7.	– वही –	पृ.50
8.	संपा. हरिवंशलाल शर्मा, "हिंदी साहित्य का बृहद् इतिहास,"	पृ.261
9.	– वही –	पृ.262
10.	– वही –	पृ.215
11.	डॉ. इंद्रनाथ मदान, "हिंदी उपन्यास पहचान और परख,"	पृ.57
12.	– वही –	पृ.58
13.	डॉ. शं. ना. गुंजीकर, "अ. गो. शेवड़े और उनका साहित्य,"	पृ.134
14.	संपा. हरिवंशलाल शर्मा, "हिंदी साहित्य का बृहद् इतिहास,"	पृ.234
15.	संपा. डॉ. रामदरश मिश्र, "हिंदी उपन्यास के सौ वर्ष,"	पृ.237
16.	विमल सहस्त्रबुध्दे, "हिंदी साहित्य में चित्रित नारी मनोविज्ञान"	पृ.212
17.	– वही –	पृ.212
18.	संपा. हरिवंशलाल शर्मा, "हिंदी साहित्य का बृहद् इतिहास,"	पृ.236
19.	– वही –	पृ.237
20.	संपा. डॉ. रामदरश मिश्र, "हिंदी उपन्यास के सौ वर्ष,"	पृ.237
21.	संपा. बाँकेबिहारी भटनागर, "शेवड़े : व्यक्तित्व, विचार और कृति"	पृ.75
22.	– वही –	पृ.78

23. डॉ. श.म. गुणाकर, "अ.गो. शेवड़े और उनका साहित्य," पृ.194

24. – वही – पृ.198

25. – वही – पृ.200

26. – वही – पृ.210

27. – वही – पृ.212

28. – वही – पृ.213

29. – वही – पृ.214

30. – वही – पृ.221

31. – वही – पृ.224

32. – वही – पृ.227